संस्कृति

चित्तभूमि की खेती

राम प्रकाश द्विवेदी

संस्कृति : आचार्य नरेन्द्र देव

Site:	Virtual Learning Environment
Course:	निबंध
Book:	संस्कृति : आचार्य नरेन्द्र देव
Printed by:	Guest User
Date:	Sunday, 17 July 2016, 01:44 PM

Table of Contents

संस्कृति : आचार्य नरेन्द्र देव

विषय:संस्कृति-विमर्श के आयाम

विषय-प्रवेश

विषय-प्रतिपादन : (क)आचार्य नरेंद्र देव:राजनीतिक विचारक और साहित्यकर्मी

(ख)संस्कृति: विवेचन एवं प्रतिपाद्य

(ग)संस्कृति:वैचारिक बुनावट एवं भाषिक गठन

विवेचन

निष्कर्ष

पाठ में आए शब्द

अभ्यास के लिए प्रश्न

पहेली और प्रयोग

संदर्भ-सूची

वेब संदर्भ

संस्कृति : आचार्य नरेन्द्र देव

विषय : हिंदी

अध्याय : संस्कृति : आचार्य नरेन्द्र देव

अध्याय लेखिका : रामप्रकाश द्विवेदी

कॉलेज / विभाग : डॉ.बी.आर.आंबेडकर महाविद्यालय

विषय:संस्कृति-विमर्श के आयाम

विषय-क्षेत्र : संस्कृति एक बहुप्रचलित पद होने के बावजूद समझ के स्तर पर अत्यंत जटिल पद है। विद्वानों ने इसे परिभाषित और विवेचित करने का सतत उद्यम किया है, किंतु इसकी समझ संबंधी जटिलताएँ कभी कम नहीं हुईं। फिर, इस शब्द का इस्तेमाल हर खासो-आम रोजमर्रा के जीवन में धड़ल्ले से करता है। इसके चलते कहा जा सकता है कि यह पद सर्वाधिक जनतांत्रिक है। परिणामस्वरूप इसके इतने बिंब उपस्थित होते हैं कि उन्हें एक रूप में समाहित कर पाना संभव नहीं रहा। यही कारण था कि इस पद का मनमाना इस्तेमाल हुआ और सभ्यता के इतिहास में इसके कारण बड़े विवाद हुए।संस्कृति का अध्ययन विभिन्न अनुशासनों के अंतर्गत किया जाता है। मनोविज्ञानी और भाषाविद् भाषा और संस्कृति के अवधारणात्मक पहलुओं और संचारात्मक स्थितियों का अध्ययन करते हैं, जबकि समाजशास्त्री,संस्कृति और समाज के अंतर्संबधों का विवेचन करते हैं। नृविज्ञानी संस्कृति और मानव सभ्यता के विकास और साहित्यकार संस्कृति के संवेदनात्मक आयाम की विवेचना करता है। इन भिन्न-भिन्न अनुशासनों में संस्कृति की चर्चा होने के चलते इसे अलग-अलग ढंग से परिभाषित करने और समझने का प्रयत्न हुआ है।इसके बावजूद संस्कृति को कुछ वाक्यों में समझा पाना विद्वानों के लिए हमेशा ही कठिन कार्य रहा है। आचार्य नरेंद्र देव इसी दिशा में आगे बढ़ते हैं और संस्कृति के विविध आयामों का विश्लेषण करते हुए उसकी एक सकारात्मक समझ निर्मित करते हैं।

विषय-प्रवेश

अक्सर कहा जाता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। यदि इसे थोड़ा बदल कर कहें कि वह एक सांस्कृतिक प्राणी है, तो अतिशयोक्ति न होगी। मानव जीवन और उसका विकास संस्कृति के बिना संभव नहीं हैं। संस्कृति स्रोत और प्रवाह दोनों ही है और उसकी ये दोनों क्रियाएँ साथ-साथ चलती रहती हैं। परेशानी तब खड़ी होती है, जब हम उसके प्रवाह को अवरुद्ध कर उसे जड़ीभूत करने का प्रयास करते हैं। संस्कृति संबंधी विमर्श में हमें बहुधा इसके दोनों पक्ष देखने को मिल जाते हैं। विद्वानों के बीच भी संस्कृति संबंधी विवेचन को लेकर पर्याप्त मतभेद रहा है। यह मतभिन्नता हमें समाज के स्तर पर भी दिखाई देती है। संस्कृति क्या है और हमारे जीवन में इसकी भूमिका क्या है, इस को लेकर अनेक राय हमें देखने को मिलती है। प्राय: अंतर्विरोधी भी। आचार्य नरेंद्र देव संस्कृति की प्रगतिशील और सामाजिक समरसता संबंधी व्याख्या करते हैं। वे एक विचारक, राजनीतिकर्मी, साहित्यकार और नागरिक के रूप में संस्कृति के बहुआयामी पक्षों को उभारते हैं। संस्कृति हमें एक अलग अस्तित्व भी प्रदान करती है। यह अलग पहचान बनाने और बचाने के चलते संस्कृतियों की आपसी टकराहट देखने को मिलती है। आतंकवाद,अलगाववाद और हिंसा के केंद्र में अस्मिता की तलाश दिखाई देती है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री और समाज चिंतक अमर्त्य सेन का मानना है कि हम अनेक अस्मिताओं के साथ जीवित रहते हैं। लेकिन जब केवल एक ही अस्मिता को अपनी मूल अस्मिता मान बैठते हैं, तब हम हिंसक भी हो उठते हैं।– इसलिए जरूरत इस बात की है कि हम संस्कृति की उदारवादी और व्यापक व्याख्या करें। आचार्य नरेंद्र देव का संस्कृति निबंध, हमें इसी उदारता की दिशा में ले जाता है। वे संस्कृति के प्रवाहपूर्ण स्वर को उभारते हैं और उसमें परिवर्तित जीवन मूल्यों के समावेश के पक्षधर दिखाई देते हैं। संस्कृति का यह विवेचन हमें समन्वयमूलक तो बनाता ही है, वह आधुनिक दृष्टि का पोषक भी बन जाता है, जो स्वाभावत: संकीर्णता विरोधी है।

विषय-प्रतिपादन : (क)आचार्य नरेंद्र देव:राजनीतिक विचारक और साहित्यकर्मी

आचार्य नरेंद्र देव का जन्म 30 अक्टूबर 1889(एक दूसरे मतानुसार 31 अक्टूबर 1890)– को सीतापुर(उ0प्र0) में बाबू बलदेव प्रसाद खत्री के घर हुआ।इनका घरेलू व मूल नाम अविनाशीलाल था।1913ई0 में आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. किया और फिर1915 में एल.एल.बी. करने के बाद फै़जाबाद(उ.प्र.) में अपने पिता की भाँति वकालत करने लगे। इसी समय के आसपास वे राजनीति और राष्ट्रीय आंदोलन के प्रति आकर्षित हुए। लोकतांत्रिक समाजवाद के सिद्धांतकार आचार्य नरेंद्र देव एक कर्मठ राजनेता होने के साथ-साथ सुविज्ञ चिंतक भी थे।बाल गंगाधर तिलक और योगी अरविंद के संपर्क में आने के साथ वे भारत की स्वाधीनता के लिए समर्पित हो गए। इनके चिंतन पर स्वामी रामतीर्थ , श्रीमती एनी बेसेंट और मदन मोहन मालवीय का गहरा असर था।उन्होंने कानून की पढ़ाई की और शिक्षण कार्य से भी खुद को जोड़ा। 1920 में कांग्रेस के असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए उन्होंने वकालत छोड़ दी।राजनीति के साथ-साथ वे इतिहास,समाजशास्त्र और शिक्षाशास्त्र के भी विद्वान थे। सच्चे अर्थों में वे एक शिक्षक ही थे। पं. जवाहर लाल नेहरू के कहने पर वे काशी विद्यापीठ में 1921 में अध्यापन करने लगे और बाद में उसके कुलपति भी बने।एक अध्यापक के तौर पर वे मार्क्सवाद और बौद्ध दर्शन की ओर उन्मुख हुए। महात्मा गाँधी का सान्निध्य उनके लिए युगांतकारी सिद्ध हुआ। वे समाजवाद के सूत्रधार बने और उसकी सैद्धांतिकियों का विवेचन हिंदी भाषी समाज के लिए उपलब्ध किया।राम मनोहर लोहिया और जय प्रकाश नारायण के साथ नरेंद्र देव समाजवाद का त्रिभुज रचते हैं। प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापन(1934) से ही वे उसके महत्त्वपूर्ण पदों पर रहे।स्वाधीनता आंदोलन के दौरान उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा।

समाजवादी विचारों के प्रचार-प्रसार हेतु उन्होंने लखनऊ से संघर्ष(साप्ताहिक) पत्रिका संपादन भी किया। ‘जनवाणी’ के जरिए शिक्षण पद्धति और शिक्षकों की स्थिति का विवेचन किया।

आचार्य नरेंद्र देव की प्रमुख कृतियाँ हैं :‘राष्ट्रीयता और समाजवाद’ , राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास ,समाजवाद और राष्ट्रीय क्रांति, बोधिचर्या और महायान,बौद्ध धर्म दर्शन,समाजवाद- लक्ष्य तथा साधन’(भाषण संग्रह)और अभिधर्म कोश । उनकी समस्त रचनाओं का संकलन नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं पुस्तकालय द्वारा तीन खंडों में प्रकाशित है। उन्हें न केवल हिंदी,संस्कृत,उर्दू और अंग्रेजी का ज्ञान था, वरन् वे पाली,प्राकृत,बंगला और जर्मन तथा फ्रेंच भाषाओं में भी दक्ष थे। हिंदी में पाठ्य पुस्तकों की कमी को देखते हुए, उन्होंने अमेरिका,रूस,इंग्लैंड, इटली आदि देशों का इतिहास भी लिखा।उत्तर-प्रदेश शासन ने 1937 में गठित शिक्षा-सुधार समिति का उन्हें अध्यक्ष भी नियुक्त किया।

वे उ.प्र. विधान सभा के सदस्य भी चुने गए। 1948 में उन्होंने लखनऊ विश्ववि़द्यालय के कुलपति पद को भी सुशोभित किया। वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे। वे गरीबी उन्मूलन के सशक्त पक्षधर थे और किसानों के मसीहा। आल इंडिया किसान कांग्रेस के अध्यक्ष पद पर रहते हुए उन्होंने किसान आंदोलन को गति दी और किसानी जीवन की विसंगतियों का उद्घाटन किया।19 फरवरी,1956 में अपना अविस्मरणीय योगदान दे वे इस संसार से चले गए।उनकी कृति ‘बौद्धधर्म दर्शन’ पर 1956 की सर्वश्रेष्ठ रचना का सम्मान साहित्य अकादमी द्वारा उन्हें प्रदान किया गया।

आज उन्हें न केवल एक राजनीतिकर्मी के रूप में याद किया जाता है, वरन् एक संवेदनशील रचनाकार के रूप में हमारे समक्ष

जीवित हैं। प्रगतिशील चेतना के वाहक और मानवतावादी जीवन मूल्यों के सशक्त स्तम्भ के रूप में उन्हें सदा याद किया जाएगा।

स्मरण:आचार्य नरेन्द्र देव

समाजवाद का सवाल केवल रोटी का सवाल नहीं है, समाजवाद मानव स्वतंत्रता की कुंजी है, यह कहने वाले आचार्य नरेन्द्र देव हिंदी में समाजवाद के पहले व्याख्याकार थे। उन्होंने लोकतांत्रिक समाजवाद की बात करते हुए समाजवाद को राष्ट्रीयता और किसान आंदोलन से जोड़ा। उनके आदर्शों और सिद्धांतों में जनहित की भावना सदैव सर्वोपरि रही। उन्होंने अतीत के अनुभव के आलोक में ही वर्तमान को देखा और इतिहास, राजनीति, समाजशास्त्र तथा साहित्य के विविध विषयों पर अधिकारपूर्वक कलम चलाई। उन्होंने उसी साहित्य को प्रगतिशील माना, जो जीवन को केंद्र में रखकर चलता हो। जीविकोपार्जन के लिए आचार्य नरेन्द्र देव ने कानून की पढ़ाई कर वकालत का रास्ता चुना था, पर स्वीधानता संग्राम के दौरान असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए उन्होंने वकालत छोड़ दी थी। उन्होंने लोकमान्य तिलक के नेतृत्व में अपने राजनीतिक जीवन को प्रेरणा एवं गति दी। वे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के भी बहुत प्रिय थे।

आजादी के लिए संघर्ष करते हुए उन्हे कई बार जेल-यात्राएँ करनी पड़ी थीं। 1941 में जब वे जेल से छूटे तो उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया था। तब गांधी जी ने उनसे प्राकृतिक चिकित्सा के लिए आश्रम में ही रहने का आग्रह किया। आश्रम में रहते हुए एक रात अचानक उनकी तबियत बहुत खराब हो गई। जो चिकित्सक नियुक्त थे, वे घबरा गए। उन्होंने गांधी जी को जाकर जगाया। गांधी जी उन्हे देखने पहुंचे। वह दिन उनका मौन का दिन था। उन्होंने नरेन्द्र देव के लिए अपना मौन तोड़ा और उसी समय मोटर गाड़ी भेजकर वर्धा से डाक्टर को बुलवाया। 1921 में पंडित जवाहरलाल नेहरू के विशेष आग्रह पर आचार्य नरेन्द्र देव ने काशी विद्यापीठ में शिक्षण कार्य करना स्वीकार किया। बाद में वे वहां के कुलपति भी बने। विद्यापीठ में सेवाकाल को अपनी अक्षुण्ण पूंजी स्वीकारते हुए, उन्होंने 'मेरे संस्मरण' में लिखा है, 'अपनी जिंदगी पर एक निगाह डालने से मालूम होता है कि जब मेरी आंखें मुंदेंगी, मुझे एक परितोष होगा कि जो काम मैंने विद्यापीठ में किया है, वह स्थायी है।'

महेशचंद्र त्रिपाठी

(ख)संस्कृति: विवेचन एवं प्रतिपाद्य

आचार्य नरेंद्र देव ने इस निबंध में भारत की संस्कृति का विवेचन नयी चेतना के आलोक में किया है। वे जहाँ धर्म-दर्शन को भारतीय संस्कृति के स्त्रोत के रूप में चिह्नित करते हैं, वहीं उनका बल लोक मानस का आपसी सौहार्द और उसकी सामूहिक भावना पर भी रहा है। वे ऐसे रचनाकार हैं, जो शब्द संधान से नहीं चूकते।'संस्कृति' निबंध की शुरुआत वे 'संस्कृति' शब्द का व्यवहार अंग्रेजी शब्द 'कल्चर' के लिए होता है' जैसे वाक्य से करते हैं, जो उनके निबंध का मंतव्य और दिशा दोनों इंगित कर देता है। मंतव्य यह कि वे संस्कृति को न केवल भारतीय वरन् पश्चिमी जीवन दृष्टि से भी देखने का उपक्रम करेंगे और दिशा यह कि उन्हें भाषाओं के आपसी संवाद से कोई गुरेज नहीं है। नरेंद्र देव जी ने हिंदी आंदोलन में भी सक्रियता से भाग लिया था इसलिए कई दफे उन्हें अंग्रेज़ी विरोधी भी मान लिया जाता था, जबकि ऐसा कतई नहीं था। वे भाषाई संवाद के समर्थक ही थे। क्योंकि वे इसके ठीक बाद बांग्ला भाषा के यशस्वी रचनाकार गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर का हवाला देते हैं। रवि बाबू संस्कृति के लिए दृष्टि शब्द की प्रस्तावना करते हैं। आचार्य नरेंद्र देव बड़ी कुशलता से संस्कृति को चित्त भूमि की खेती बताते हैं। हमें ध्यान देना चाहिए कि यहाँ भी उनका किसानी सरोकार ही बोल रहा है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल भी चित्तवृतियों को बड़ा महत्त्व देते हैं और साहित्य निर्माण में उसकी सक्रिय भूमिका पहचानते हैं। साहित्य और संस्कृति एक दूसरे के करीबी बनते हैं और पूरक भी। नरेंद्र देव संस्कृति को मानसिक उद्यम के रूप में पहचानते हैं और उसे शारीरिक क्रियाकलाप का स्त्रोत मानते हैं।कहा जा सकता है कि संस्कृति सोच (चित्त) निर्माण का उपकरण है और आचरण उसी का प्रतिफल। इस प्रकार वे अपना पहला निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं कि जिस प्रकार हमारी दृष्टि होगी उसी प्रकार का हमारा क्रियाकलाप होगा। अनेक विद्वानों का मानना है कि विचार ही व्यवहार की रूपरेखा का नियामक है। आचार्य नरेंद्र देव भी इस स्थापना को उभारते है और संस्कृति को ही व्यवहार की पृष्ठभूमि के रूप में स्थापित करते हैं। यानी हमारे समस्त क्रियाओं के पीछे हमारा चित्त अथवा मन मौजूद होता है।

अपने इस विचार बिंदु को आगे बढ़ाते हुए वे कहते हैं कि हमें विश्व और समाज संबंध स्थापित करने के लिए एक विशेष नजरिए की आवश्यकता होती है। जब दुनिया विराट और विस्तृत हो जाती है, तो हमारे इस नजरिए के समक्ष इस विस्तृत संसार को एकत्र रखने की चुनौती पैदा होती है। दरअसल प्राचीन काल में यह हमारा पहला सांस्कृतिक मूल्य बना कि कैसे विश्व को विविधताओं के बावजूद एकत्र रखा जाय। इसे अंजाम देने के लिए जो कसौटी बनी वह 'जीव मात्र के लिए मैत्री व अद्वेष की भावना' थी। नरेंद्र देव कहते है कि कार्य या व्यवहार रूप में इसका दायरा संकुचित और सीमित है, क्योंकि यह महज एक वैयक्तिक पहल भर है। इसमें लोक का समावेश नहीं होता।

प्राचीन काल के इस सीमित बोध को तोड़ने के लिए आचार्य नरेंद्र देव यह प्रस्तावित करते हैं कि 'व्यक्तियों के चित्त के साथ-साथ एक लोकचित्त भी बनता रहता है'। इस लोकचित्त के पीछे समाज शक्तियाँ होती हैं। इस प्रकार के समाज और एक समय के बाद एक बड़े भूभाग के समूह के रूप में विकसित हो जाते हैं, जो आपस में अनेकता और समानता के कई सूत्र विकसित कर लेते हैं। परिणामस्वरूप, राष्ट्रीयता की भावना पैदा होती है। नरेंद्र देव सांस्कृतिक मूल्यों को ही राष्ट्र निर्माण और राष्ट्रीयता की भवना के विकास से संबद्ध कर देते हैं। वे आगे लिखते हैं कि एकता का बोध केवल राष्ट्र की सीमाओं तक ही महदूद नहीं रहता, वरन् वह 'एक विश्व' की भावना की ओर भी उन्मुख होता है। विचारों और बातों की समानता राष्ट्र के चित्त का निर्माण करती है। चूँकि अनेक राष्ट्रों में भी अनेक बाते समान हैं, इसलिए कई राष्ट्रों के चित्तों में भी समानता प्राय: देखने को मिलती है। नरेंद्र देव , इसप्रकार, संस्कृति को विश्वबोध के निर्माण का एक महत्त्वपूर्ण कारक मानते हैं।

आधुनिक युग में निजता को भी बड़ा महत्त्व मिला है। व्यक्ति (Individual) की अवधारणा ने मनुष्य को अपनी क्षमताओं का स्वामित्व प्रदान किया। उसने श्रेणीक्रम(Hierarchy)को तोड़ अपने लिए नयी किस्म की आजादी तलाशी। आचार्य नरेंद्र देव

इसलिए कहते हैं कि 'आज व्यक्तिगत चित्त और लोकचित्त दोनों को सुभावित करने की आवश्यकता है'। इसके बाद वे युगबोध ओर चित्त को संबद्ध करते हैं। उनका साफ मानना है कि युग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए चित्त में भावनाओं का संचार करना चाहिए और युग की आवश्यकता का उल्लेख करते हुए वे-राष्ट्रीयता और जनतंत्र को हमारे समक्ष रखते हैं। वास्तव में, वे जिस विश्वबोध और राष्ट्र-चित्तों की बात का पहले उल्लेख कर रहे थे उसमें इन्हीं दोनों-राष्ट्रीयता और जनतंत्र को ही वे केंद्र में मानते हैं। इसलिए वे कहते भी हैं कि 'आज इनका कार्य सर्वत्र देखा जा सकता है।' वे 'राष्ट्रीयता और जनतंत्र' को पुरानी 'मैत्री और अद्वेष' की भावना से अधिक व्यापक और अधिक क्रियाशील मानते हैं।

पुराने विचार एकाएक खत्म नहीं होते। नवीनता और प्राचीनता की टकराहट चलती रहती है। नरेंद्र देव का मानना है कि पुरानी विचार-प्रणाली नयी का मार्ग अवरुद्ध करने के लिए सक्रिय हो उठती है। इसका हमारे जीवन-प्रवाह पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है। यदि देखें, तो नरेंद्र देव यह संकेत करते हैं कि पुराने मूल्य, जिनमें सांप्रदायिक और धार्मिक संकीर्णतावाद जैसे विचार सक्रिय थे, वे आधुनिक मूल्यों के पनपने में व्यवधान पैदा करते हैं। सच्चिदानंद सिन्हा ने भी इस सवाल को उठाया है। ऐसी ताकतें देश और समाज को प्रतिगामी दिशा में मोड़ देती हैं। नरेंद्र देव आह्वान करते हैं कि ऐसी ताकतों को हर व्यक्ति और राष्ट्र को न केवल पहचानना चाहिए, वरन् इनका विरोध भी करना चाहिए।

नई और पुरानी शक्तिओं की विभेदक रेखा की पहचान के लिए नरेंद्र देव विज्ञान को कसौटी के रूप में प्रस्तावित करते हैं। विज्ञान आस्था की जगह तर्क, परलौकिकता की जगह इहलौकिक, ईश्वर के स्थान पर मनुष्य को प्राथमिकता देता है। प्राचीन शक्तियाँ, जहाँ हमारी चुनौतियों को परिभाषित करने में असमर्थ होती हैं, वहीं वैज्ञानिक चेतना हमारे समक्ष नया स्वप्न और नये आदर्श प्रस्तुत करती है। अमृतराय ने लिखा है कि मनुष्य की भय,भूख,निद्रा और मैथुन जैसी जरूरतें अभी भी बनी हुई हैं परंतु बाकी सब कुछ बदल गया है और इस बदलाव के पीछे विज्ञान का आगमन ही है। नरेंद्र देव जी कहते हैं कि इस विज्ञान की ताकत ने राष्ट्रीय हदों का ध्वंस किया है और अंतरराष्ट्रीय साझापन पैदा किया है। यह साझापन अनुभव के स्तर पर,समस्याओं के समाधान, ज्ञान और वस्तुओं के विनिमय और तकनीक के हस्तांतरण के रूप में देखा जा सकता है। जिसे आज हम भूमंडलीकरण के रूप में बखूबी पहचानते हैं, उसका संकेत काफी पहले नरेंद्र देव जी के इस निबंध मिल जाता है।आज जबकि विद्वानों का एक खेमा भूमंडलीकरण को एक खतरे और चुनौती के रूप में व्याख्यायित कर रहा है, आचार्य नरेंद्र देव ने अंतरराष्ट्रीयता को एक वांछनीय विचार और स्थिति के रूप में देखा था। तभी तो वे कहते हैं, 'एक भावना सकल विश्व को व्याप्त करना चाहती है और एक नए सामंजस्य की ओर संसार बढ़ रहा है।यह शक्तियाँ सफल होकर रहेंगी, क्योंकि यह युग की माँग को पूरा करना चाहती हैं'।–अंतरराष्ट्रीयता आज के समय की माँग है । वह विश्व समुदाय की समस्याओं को नए परिप्रेक्ष्य में देखती है। आज दुनिया में अनेक अंतरराष्ट्रीय संगठन मौजूद हैं, जो मानवाधिकारों,बाल श्रम उन्मूलन, भुखमरी, शांति, महिला सशक्तिकरण और ग्लोबल वार्मिंग जैसे मसलों पर विश्व बिरादरी को साथ लेकर कार्य कर रहे हैं। कहना न होगा कि नरेंद्र जी इन संगठनों की जरूरतों को जानते थे और भविष्य में इनकी भूमिका के प्रति आशावान थे। आज इन संगठनों का इस्तेमाल विश्व स्तर पर सांस्कृतिक संवाद को बनाने के लिए भी किया जा रहा है।

आचार्य नरेंद्र देव संस्कृति की गत्यात्मकता को रेखांकित करते हैं। वे जीवन के बदलावों के साथ संस्कृति के बदलाव को भी लाजमी मानते हैं। भारत में जीवन का बदलाव विभिन्न जातियों के आगमन से तेज गति से होता रहा है। और इसके फलस्वरूप संस्कृति कभी जड़ नहीं हुई। उसमें नयी संवेदना का संचार होता रहा, जिससे भारतीय संस्कृति का प्रवाह सुनिश्चित हो सका। आचार्य नरेंद्र देव ने समय-समय पर इस देश में आयीं नई जातियों और उनके आचार-विचार को एक संस्कृति के लिए स्वस्थ प्रक्रिया के रूप में पहचाना है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी इस

घटना को भारतीय समाज के लिए सकारात्मक चिन्ह मानते हैं।– यानी विभिन्न जातियों और विविधता पूर्ण आचारों-विचारों को

संस्कृति के लिए एक वांछनीय अवसर के रूप में पहचाना गया है। लेकिन ऐसा सभी लोग नहीं मानते। पूरी दुनिया और इस देश में एक समूह ऐसा है जो संस्कृति को शुद्धतावादी नजरिए से देखता है।यह विचार एक संकीर्ण मानसिकता का परिणाम है। नरेंद्र देव इसे सिरे से खारिज कर देते हैं।उनका दृढ़ मत है कि, 'संस्पर्श से संस्कृतियों का आदान-प्रदान होता रहता है'।

प्राचीन काल में संस्कृतियों के निर्माण में धर्म और मजहब जैसे कारकों का हाथ भी होता था,हालाँकि अन्य घटक भी अपनी भूमिका निभाते थे।आधुनिक समय में विज्ञान के आलोक और अनुभव ने मजहबी ताकतों को या तो काफी कम कर दिया है या उनमें आमूल-चूल परिवर्तन उपस्थित किया है।नरेंद्र देव का मानना है कि धर्म और मजहब की तुलना में राष्ट्रभावना एक नयी शक्ति के रूप में उभरी है।इसीलिए एक राष्ट्र के भीतर अनेक मजहबों के लोग शांति के साथ रहना स्वीकारते हैं। वे संदर्भ इस्लाम और ईसाई धर्मों का हवाला देते हैं। एशियाई देशों की एक महत्त्वपूर्ण समस्या का वे उल्लेख करते हैं-वह है इन देशों की कमजोर राष्ट्रीय भावना। इसके पीछे वे संस्कृति का धर्म के साथ घालमेल हो जाने को दोषी मानते हैं।

संस्कृति और धर्म के रिश्ते भारत में भी अभी भी सघन तरीके से बुने हुए हैं,जबकि नयी रोशनी युगधर्म के आलोक में इन्हें एक दूसरे से जुदा हो जाना चाहिए था परिणाम स्वरूप संस्कृति के बारे में हमारी जो उदार समझ बननी चाहिए थी वह नहीं बन सकी। आज भी हम संकीर्णताओं के शिकार हैं। नरेंद्र देव जी हमें अतीतगामी होने के प्रति आगाह करते हैं और चेतावनी स्वरूप कहते हैं कि, 'इतिहास बताता है कि वही देश पतनोन्मुख है, जो युग-धर्म की उपेक्षा करते हैं और परिवर्तन के लिए तैयार नहीं हैं'। संस्कृति अतीत और वर्तमान के एक जीवंत संवाद से विकसित होती है। अतीत पूरी तरह त्याज्य नहीं होता। अनेक प्रगतिशील विचारकों का मानना है कि आग और पहिया हमारे सबसे पुराने आविष्कार हैं जो किसी न किसी रूप में आज भी आधुनिक सभ्यता और संस्कृति के आधार बने हुए हैं। इसलिए नयी शक्तियों के साथ पुराने का उपयोगी सामंजस्य बिठाना जरूरी है। रूढ़ और जड़ीभूत मूल्यों का निराकरण कर ही हम अपनी प्रगित सुनिश्चित कर सकते हैं। आचार्य नरेंद्र देव इस निबंध के समापन की ओर बढ़ते हुए भारतीय संस्कृति के एक गहरे अंतर्विरोध की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं। वह है, मुसलमानों की सहभागिता। देश की कट्टर और फिरकापरस्त ताकतें मुसलमानों को भारतीय संस्कृति के 'प्रदूषक' के रूप में मानती हैं। आचार्य नरेंद्र देव कहते हैं कि ऐसे दकियानूसी विचारों से भेदभाव ही पनपता है और एकरूपता की कोशिशों को धक्का लगता है। हमें इससे मुक्त होना होगा। कानून और आर्थिक पद्धति इसमें हमारी मदद कर सकती हैं। ये दोनों भी नयी ताकतें हैं। इनका आलंबन ग्रहण कर हम प्रतिगामी और विद्वेषपूर्ण विचारों से मुक्त हो सकते हैं और देश के सभी नागरिकों को उन्नति में सहभागी बना सकते हैं। नरेंद्र देव जी की समापन टिप्पणी है, 'संस्कृति का ठीक-ठीक अर्थ कर और उसके

स्वरुप को समझकर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। अन्यथा संस्कृति के नाम पर 'बहुअनर्थ' होगा और राष्ट्रीय एकता के काम में बाधा पड़ेगी'। नरेंद्र देव संस्कृति की एक गलत समझ बनने के खतरों को बहुआयामी मानते हैं। वह राष्ट्र, समाज और व्यक्ति को तो तोड़ता ही है, मानवता के लिए भी एक भयावह स्वप्न रचता है।

संस्कृति को नयी शक्तियों की रोशनी में देखने, उसका अंतरराष्ट्रीय महत्त्व प्रतिपादित करने,उसे एक प्रवाह और गैर-मजहबी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करने और राष्ट्रीय एकता के निर्माण में उसकी सर्जनात्मक भूमिका की पहचान करने के चलते, यह निबंध एक युगांतकारी दस्तावेज है। जब-जब देश संकीर्णतावादी सांप्रदायिकता और अतीतवादी जड़ता की चुनौतियों से रूबरू होगा, यह निबंध नागरिक समाज और विश्व विरादरी के लिए एक प्रकाश-स्तम्भ सिद्ध होगा।

(ग)संस्कृति:वैचारिक बुनावट एवं भाषिक गठन

निबंध की एक कसौटी का उल्लेख करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा कि निबंध में विचार ठूँस-ठूँस कर भरे होने चाहिए। वे निबंध की रचना-प्रक्रिया में बुद्धि और भाव को सहवर्ती मानते हैं।– 'संस्कृति' निबंध में भी विचारों की सघन बुनावट हुई है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि संस्कृति एक जटिल पद है, किंतु नरेंद्र देव इसे सुलझाने और इसका ठोस रूप प्रस्तावित करने में सर्वथा सक्षम रहे हैं। संस्कृति की अधिकांश व्याख्या अमूर्त विवेचनों में सिमट जाती है।इस निबंध में यह अमूर्तन नहीं है। संस्कृति एक ठोस परिणाम देने वाली शक्ति के रूप में उभरती है। वह राष्ट्र और व्यक्ति दोनों के आचरण की निर्धारिका ताकत की तरह हमारे समक्ष प्रकट होती है। वह मनुष्य के कर्म की प्रेरणा बनती है, जिससे देश और समाज का भविष्य तय होता है। नरेंद्र देव संस्कृति के प्राचीन और अधुनातन रूपों को बड़े सूत्रबद्ध तरीके से प्रस्तुत करते हैं। इससे संस्कृति की मानव समाज की जरूरतों का खुलासा तो होता ही है, उसके निरंतर बदलते स्वरूप पर भी प्रकाश पड़ता है।अपनी बातों और तर्कों को पुख्ता बनाने के लिए नरेंद्र देव दूसरे विद्वानों का उल्लेख करने से गुरेज नहीं करते। संस्कृति के लिए ही रवींद्र नाथ टैगोर द्वारा प्रयुक्त पद 'दृष्टि' का वे हवाला देते हैं। इससे संस्कृति के मूल रूप और उसकी मूल भावना को समझने में मदद ही मिली है। संस्कृति, 'दृष्टि' का संदर्भ पाकर एक नयी अर्थदीप्ति से आलोकित हो उठती है।

संस्कृति को नरेंद्र देव चित्त भूमि की खेती कहते हैं। चित्त की भी परिकल्पना उन्होंने खेत की तरह की है। जिसे उपजाऊ बनाने के लिए समय-समय पर उसकी निराई-गुड़ाई करनी पड़ती है। उसकी खरपतवार निकालनी पड़ती है। कुछ इसी तरह चित्त-भूमि पर नकारात्मक मूल्यों का निरंतर प्रभाव और दबाव पड़ता है और शुभ मूल्य कहीं दब जाते हैं। एक कुशल किसान की तरह हमें उन्हें गैर जरूरी मानते हुए बाहर निकाल फेंकना होता है। यह एक सतत प्रयास है। आचार्य नरेंद्र देव संस्कृति को किसानी जीवन संस्कारों से हमें समझाते हैं, जो बात टी.एस. एलियट ने परंपरा के बारे में कहा है कि वह घलुए में मिली चीज नहीं है, वरन् हमें उसे श्रम से अर्जित करना पड़ता है–उसी का संकेत नरेंद्र देव संस्कृति के संबंध में देते हैं।

आचार्य शुक्ल की सूत्रात्मक शैली का प्रभाव नरेंद्र देव जी के इस निबंध में भी देखा जा सकता है।उदाहरण के लिए – संस्कृति चित्त-भूमि की खेती होती है,जिस प्रकार की हमारी दृष्टि होगी, उसी प्रकार का हमारा क्रियाकलाप होगा,विश्व और मानव के प्रति एक दृष्टि विशेष की आवश्यकता होती है, व्यक्तियों के चित्त के साथ-साथ एक लोक चित्त भी बनता रहता है,जीवन स्थिर और जड़ नहीं है- आदि कथनों में सूत्रात्मकता देखी जा सकती है। आचार्य नरेंद्र देव भाषा के भी गंभीर अध्येता थे, इसलिए वे शब्दों को उनकी पूरी गंभीरता और जवाबदेही के साथ इस्तेमाल करते हैं। यह निबंध भाषाई व तार्किक अन्विति का एक अनूठा उदाहरण है।

अपने तर्कों की बुनावट करते हुए नरेंद्र देव जहाँ संस्कृति को हमारे निजी जीवन की आवश्यकता बताते हैं, वहीं उसे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया और एकता के सूत्र के रूप में प्रस्तावित करते हैं। इसके चलते उनका संस्कृति संबंधी विवेचन एक व्यापक सरोकार पा लेता है। वह निजता से वैश्विक की यात्रा करने लगता है। वह समय के सनातन प्रवाह और युगधर्म के निर्वाह दोनों के लिए आवश्यक हो उठती है। संस्कृति कैसे सामान्य जीवन मूल्यों-मैत्री और अद्वेष-से आगे बढ़कर राष्ट्रीय एकता और अंतरराष्ट्रीय बंधुत्व की नियामक शक्ति बन जाती है, इसका सिलसिलेवार ब्यौरा नरेंद्र देव देते हैं। दरअसल संस्कृति का जटिल स्वरूप सामाजिक जटिलताओं के साथ विकसित होता चला गया। वह निजी जरूरत से अधिक सामाजिक आवश्यकता बनती चली गयी।

इस निबंध में संस्कृति का कोई दार्शनिक विवेचन या मात्र अमूर्त अवधारणा के रूप में उसकी प्रतिष्ठा का प्रयत्न नहीं हुआ है। उसकी एक सोद्देश्यता है, जिसे नरेंद्र देव बड़े सचेत ढंग से प्रकट करते हैं। यह सोद्देश्यता –लोकचित्त,राष्ट्रीयता की भावना,विश्व

बोध और संस्कृति को धर्म-मजहब से अलग करने तथा उसे युगधर्म की शक्ति के रूप में पहचानने की कोशिशों में दिखाई देती है। यानी निबंध की बुनावट का प्रयोजन बिल्कुल साफ है। वह भारतीय समाज और अंतरराष्ट्रीय बिरादरी के भीतर पुराने और प्रतिगामी मूल्यों के निषेध की तार्किक परिणति है। राष्ट्रीयता के विकास से अनेक बातें,मसलन मजहबी संकीर्णता आदि स्वत: समाप्त हो जाती हैं। संस्कृति का इस निबंध में किया गया विवेचन एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य, इसी राष्ट्रीयता और जनतंत्र का निर्माण करना है, जो आरंभिक कबीलाई और मध्ययुगीन मजहबी जीवन संस्कृतियों से भिन्न है।

आचार्य नरेंद्र देव एक राजनीतिक आंदोलनकारी की भाँति प्रतिगामी शक्तियों के विरोध का आह्वान करते हैं। आंदोलन से संबद्ध व्यक्ति जब साहित्यिक कृतियों का सृजन करता है, तो उसकी रचना में प्राय: उसका वह तेवर देखने को मिल ही जाता है, जो उसकी गतिविधि का हिस्सा होता है। संस्कृति संबंधी इस निबंध की एक राजनीति भी है और विचारधारा भी। यानी इसे कोरे भाषाई और साहित्यिक रचना के रूप में देखना उचित नहीं होगा। यही कारण है कि इस निबंध में तर्कशीलता और तथ्यात्मक वैज्ञानिकता का पुट अधिक मिलता है,लालित्य और तरंगमयता न के बराबर। नरेंद्र देव जब प्रतिगामी ताकतों की खिलाफत करते हुए लिखते हैं कि, ‘‘यह शक्तियाँ युग-धर्म के विरुद्ध खड़ी हुई हैं और जीवन प्रवाह को अतीत की ओर लौटाना चाहती हैं,हमारे राष्ट्रीय जीवन को एक सोते में बंद करना चाहती हैं और उसी को एक पुण्यतीर्थ कल्पित कर जीवन की अविच्छिन्न धारा से हमको पृथक करना चाहती हैं। प्रत्येक व्यक्ति और राष्ट्र को इन शक्तियों को पहचानना चाहिए और उनका विरोध करना चाहिए।’’– तब उनके कथन में एक एक्टीविस्ट बोलता दीखता है। पूरा निबंध विचारों की साफगोई और पक्षधरता का प्रमाण उपस्थित करता है। इस निबंध में प्रस्तुत संस्कृति विवेचन कई बार नए आधुनिक और वैज्ञानिक समाज के निर्माण का बहाना भर प्रतीत होता है। ऐसे स्थलों पर नरेंद्र देव आधुनिक समाज की चुनौतियों से अधिक रुबरु होते हैं,संस्कृति के विश्लेषण से कम। वे इसी क्रम में आर्थिक पद्धति,कानून आधारित भारतीय समाज का उल्लेख करते हैं। इस बात की पुष्टि प्रो.विजेंद्र स्नातक द्वारा लिखित निबंध ‘संस्कृति का स्वरूप और भारतीय संस्कृति’– और विवेच्य निबंध की तुलना कर,देखा जा सकता है। इसमें स्नातक जी संस्कृति के विवेचन से न तो भटकते और न ही उसमें किसी विचारधारा विशेष का समावेश कराते हैं। लेकिन लेखक को यह छूट है कि वह रचना को किस तरह विन्यस्त करे। खैर, नरेंद्र देव संस्कृति की अवधारणा पर उतना बल नहीं देते जितना उसके सरोकारों पर और उसके फंक्शन पर।कई दफा ऐसा लगता है कि वे संस्कृति के जरिए मनुष्य के कर्म और आचरण के मूल्यांकन हेतु अधिक चिंतित हैं और यह भी कि संस्कृति कैसे सामाजिक रूपांतरण का औजार बन सकती है, यह खोज, इस निबंध का मूल कथ्य बन जाता है।

आचार्य नरेंद्र देव ने इस निबंध की भाषा का मिजाज तत्समधर्मी ही रखा है। इससे संभवत: वे अपने विश्लेषण को अधिक केंद्रित कर पाए। वे 4 करोड़ मुसलमानों का उल्लेख तो करते हैं, परंतु भारतीय संस्कृति की निर्माण प्रक्रिया में उनका भूमिका कोई साधारण-सा ब्यौरा भी उपस्थित नहीं करते। वे संस्कृति को राष्ट्रीय संस्कृति के रूप में स्थापित करने को व्यग्र प्रतीत होते हैं। राष्ट्रीय संस्कृति का विवेचन एस. आबिद हुसैन ने अपनी पुस्तक ‘भारत की राष्ट्रीय संस्कृति–’ में किया है। परंतु इतने विस्तार का अवकाश नरेंद्र देव जी के पास न था। वे अपने मंतव्य तक सीधे पहुँचते हैं। इसी कारण इस निबंध में एक तार्किक प्रवाह दीखता है, बिल्कुल संस्कृति की ही भाँति। नरेंद्र देव जी जिस एकता की बात बार-बार करते हैं, वह उनके तर्कों के विन्यास में भी दिखाई देता है ।कहना न होगा कि यह निबंध अपनी संवेदना और शिल्प विन्यास में एकरूपता बनाए रखता है। विन्यास से विवेचन कहीं भी खंडित नहीं हुआ है।

विवेचन

संस्कृति एक जटिल पद है। हमारे लिए इसका एक अर्थ हो सकता है,परंतु दूसरे इसे कैसे समझते हैं, यह एक चुनौती भरा मसला है। संस्कृति की व्याख्या और उसकी शुद्धता के आग्रह ने अनेक सवाल खड़े किए हैं। वह कई बार अतीतजीविता का पर्याय मात्र बन कर रह जाती है। ऐसे में उसको एक जड़ स्थिति मान लिया जाता है, जबकि उसे सदा ही एक प्रक्रिया के रूप में पहचानने की जरूरत होती है। फिर संस्कृति को समझने-समझाने के अनेक प्रयत्न उसकी अमूर्त अवधारणा के इर्द-गिर्द घूमते हैं। आचार्य नरेंद्र देव का निबंध इन समस्याओं का निराकरण करता है। बड़े ही कम शब्दों में वह संस्कृति के विकास और उसके स्वरूप परिवर्तन का विश्लेषण करते हुए उसका ठोस,भौतिक और वास्तविक आधार निर्धारित करता है। संस्कृति को एक सामाजिक जरूरत के रूप में विवेचित करते हुए आचार्य नरेंद्र देव उसे विश्व बंधुत्व,राष्ट्रीयता,जनतंत्र और कानून आधारित समाज के नियामक अवयव के रूप में पहचानने का उद्यम करते हैं। इसी प्रयास से निबंध का फलक विस्तार पाता है।

आज हम भूमंडलीकरण की प्रक्रिया और पद से बखूबी परिचित हैं। इस निबंध में नरेंद्र देव उसकी जरूरत को रेखांकित करते हैं। हाँ, यह जरूर है कि भूमंडलीकरण मोटे तौर पर एक आर्थिक परिघटना के रूप में जाना जाता है,जबकि इस निबंध इसका समरूप शब्द अंतरराष्ट्रीयता सांस्कृतिक आशय को ज्यादा प्रतिबिंबित करता है।

यह निबंध संस्कृति की अवधारणा को समझने में उतना मददगार नहीं होता, जितना उसके सामाजिक प्रतिफलन को। इसी सीमा के भीतर इसकी वैचारिक बुनावट हुई है,जो पद के बजाय प्रभाव को अधिक लक्षित करता है।

निष्कर्ष

आचार्य नरेंद्र देव एक समाजवादी विचारक के रूप में समादृत हैं। राजनीति और साहित्यकार के रूप में भी वे उतने ही प्रतिष्ठित हैं। मार्क्सवाद,बौद्ध दर्शन और महात्मा गाँधी के प्रभावों को उनकी रचनाओं में साफ तौर पर देखा जा सकता है। वे बहसशील मुद्दों को बड़ी सहजता से विवेचित करने में दक्ष हैं। इसका कारण यह है कि वे इन मुद्दों को सामाजिक और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में समझने का उद्यम करते हैं।वैज्ञानिक चेतना,जनतांत्रिक मूल्य,संविधान सम्मत कानून और आर्थिक पद्धति उनके विश्लेषण का आधार बनती है।

’संस्कृति’ निबंध में उनके इन आधारों को देखा जा सकता है। संस्कृति का अवधारणात्मक विवेचन न कर वे उसके व्यावहारिक और क्रियात्मक पहलू को ही अधिक उभारते हैं। इस निबंध में जहाँ-तहाँ उनका एक्टीविस्ट बोलता नजर आता है। संस्कृति के विश्लेषण के बहाने वे प्रतिगामी शक्तियों की पहचान करते हैं और भविष्य के समाज की एक परिकल्पना भी उपस्थित करते हैं। संस्कृति को एक स्टैटिक या जड़ीभूत स्थिति न मानकर, वे उसकी गत्यात्मकता पर बल देते हैं। परिणामस्वरूप संस्कृति संस्पर्श से संदूषित न होकर प्रवाहपूर्ण बन उठती है,ऐसा उनका दृढ़ मत है। भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में देखें, तो वे 4 करोड़ मुसलमानों के अधिवासी होने का हवाला देते हुए इसे एक वांछनीय स्थिति के रूप में ही स्वीकारते हैं। वे संस्कृति के अतीतगामिता के भी विरोधी रहे हैं। इस कारण संस्कृति में नए और युगीन मूल्यों के समावेश को वे एक स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में पहचानते हैं।

संस्कृति को किसी एक तरह से परिभाषित करने और एक खास चौहद्दी में बंद करके देखने से अनेक जटिलताएँ पैदा हो जाती हैं। जरूरत इस बात की है कि उसे एक प्रवाह और युगधर्म की ताकत के रूप में पहचाना जाय। यह निबंध बहुत कुछ ऐसा ही करता है,जिससे संस्कृति के बहुआयामी परिपार्श्व उभरते हैं और संस्कृति जैसी जटिल और संश्लिष्ट अवधारणा की मुक्कमल समझ बनाने में सहायक बनता है।

-

पाठ में आए शब्द

कल्चर: संस्कृति के लिए अंग्रेजी का पर्याय । कल्चर एक बहुआयामी और बहुप्रचलित शब्द है। इसे बड़े सामान्य और उतने ही गंभीर अर्थों में प्रयोग किया जाता रहा है।

रवि बाबू: बंगला भाषा के विश्वप्रसिद्ध और नोबल पुरस्कार विजेता साहित्यकार। संस्कृति के संबंध में उनके विचार आज भी अपनी मौलिकता के लिए याद किए जाते हैं।

दृष्टि:रवींद्र नाथ टैगोर द्वारा सुझाया शब्द जो संस्कृति के समरूप है।

राष्ट्रीयता: राष्ट्रीयता से पश्चिमी देशों में एक राजकीय इकाई का बोध होता है जबकि भारत की राष्ट्रीयता राजकीय न होकर सांस्कृतिक रही है।

व्यक्तिगत चित्त और लोकचित्त:अनुभव को धारण करने का निजी मानसिक फलक। जब एक बड़ा समूह एक जैसे अनुभव से गुजरता है, तो वह सामाजिक नियम और मूल्यों का निर्माण करता है। सामूहिक अनुभव को लोकचित्त कहा जाता है,जो वस्तुत: संस्कृति के निर्माण और विकास में सहायक होता है।

पुरुषार्थ:यह शब्द हमारी संस्कृति का एक परिभाषिक शब्द है, जिससे धर्म,अर्थ,काम और मोक्ष आदि चार कार्यों की गणना की जाती है। आचार्य नरेंद्र देव यहाँ इसे उद्यमशीलता के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

जनतंत्र:शासन चलाने की ऐसी व्यवस्था, जिसमें जनभागीदारी सर्वाधिक हो। इसे राजतंत्र और कुलीनतंत्र के विलोम के रुप में प्रयोग किया जाता है।

नए प्रतीक:मूल्यों और संस्कृति के बदलाव को सबसे पहले प्रतीकों के द्वारा पहचाना जाता है। नए प्रतीकों का आगमन जीवन मूल्यों के परिवर्तन की बानगी पेश करते हैं।

अंतरराष्ट्रीय विज्ञान: विज्ञान ज्ञान की वह प्रणाली है, जो भौगालिक सीमाओं और सांस्कृतिक समूहों की घेरेबंदी का अतिक्रमण कर सबके लिए उपयोगी होती है।

जातियाँ:यहाँ इसका अभिप्राय उन नस्ली समूहों से है, जो भारत में आकर बसते रहे और इसकी संस्कृति को समृद्ध करते रहे। मसलन-मुगल,तुर्क और ईसाई जातियाँ।

इस्लाम:विश्व का एक महान धर्म, जिसके अनुयायियों की संख्या करोड़ों में है।

रोमन कैथोलिक:ईसाई धर्म का एक विशेष संप्रदाय, जो प्रोटेस्टेंट की तलना में अधिक शुद्धतावादी माना जाता है।

एशिया: एक भौगालिक क्षेत्र(महाद्वीप), जिसे विश्व आबादी के लिहाज से सघन और आर्थिक समृद्धि के नजरिए से गरीब माना जाता है।

आर्थिक पद्धति: ऐसी पद्धति, जिसमें हमारे संबंध आर्थिक क्रियाओं पर अवलंबित होने लगते हैं।

-

अभ्यास के लिए प्रश्न

1.संस्कृति चित्त भूमि की खेती कैसे है,विवेचन करें।

2.रवि बाबू संस्कृति के लिए किस शब्द का प्रयोग करते थे।

3.संस्कृति का अंग्रेजी पर्याय क्या है ?

4.आचार्य नरेंद्र देव का प्रतिगामी शक्तियों से क्या अभिप्राय है?

5. 'विज्ञान ने नई शक्तियों को उन्मुक्त किया है'टिप्पणी कीजिए।

6.संस्कृति और सामाजिक परिवर्तन विषय पर एक निबंध लिखें।

7.राष्ट्रीयता और राष्ट्रवाद का अंतर स्पष्ट कीजिए।

8.धर्म और संस्कृति के लक्षण बताते हुए दोनों में अंतर स्पष्ट करें।

9.संस्पर्श से संस्कृतियों पर कैसा प्रभाव पड़ता है,खुलासा कीजिए।

10.राष्ट्रीय एकता को बनाने और बचाने में संस्कृति की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

पहेली और प्रयोग

1.संस्कृति/सांस्कृतिक शब्द का प्रयोग आप कब-कब करते हैं,नोट करें।

2.संस्कृति के लिए विभिन्न भाषाओं के शब्दों की खोज कीजिए।

3.अपने आसपास के अलग-अलग वर्ग के लोगों से संस्कृति के मायने पूछिए और उनकी सोच पर अपनी टिप्पणी लिखिए।

4.आचार्य नरेंद्र देव किसे प्रतिगामी शक्ति बताते हैं?

(क)राष्ट्रीयता

(ख)सांप्रदायिकता

(ग)वैज्ञानिकता

(घ)अंतरराष्ट्रीयता

संदर्भ-सूची

1.अमर्त्य सेन,हिंसा और अस्मिता का संकट,राजपाल,नई दिल्ली

2.विजेंद्र स्नातक,विमर्श के क्षण,नेशनल पब्लिशिंग हाउस,नई दिल्ली

3. एस.आबिद हुसैन,भारत की राष्ट्रीय संस्कृति,नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली

4. रामचंद्र शुक्ल,चिंतामणि भाग-एक,निवेदन

5. हजारी प्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल,हजारी प्रसाद द्विवेदी संकलित निबंध,नामवर सिंह(सं0),एन.बी.टी.

6. सच्चिदानंद सिन्हा,भारतीय राष्ट्रीयता और सांप्रदायिकता

7. अमृतराय,आधुनिक भावबोध की संज्ञा,

8. भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश,राम विलास शर्मा,

9.सच्चिदानंद सिन्हा,संस्कृति विमर्श,वाग्देवी,बीकानेर

10.देवराज,भारतीय संस्कृति

11.भारतीय संस्कृति,गोविंद चंद्र पाण्डेय,म.प्र.हिंदी ग्रंथ अकादमी

12.प्राचीन भारत,राधा कुमुद मुकर्जी,राजकमल,नई दिल्ली

13.मानव और संस्कृति,श्यामाचरण दुबे,राजकमल,नई दिल्ली

14.परिवर्तन और विकास के सांस्कृतिक आयाम,पूरनचंद्र जोशी,राजकमल,नई दिल्ली

वेब संदर्भ

- www.wikipedia.com
- www.nic.in
- www.samatavadi.wordpress.com
- www.hindimedia.blogspot.com
- http://in.jagran.yahoo.com/news/opinion/general/6_3_3862447.html